R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2024-26

मूल्य-7 रुपये, वर्ष-24, अङ्क-1 जनवरी 2024

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ०प्र०) का

मङ्गलायतन

स्वर्णपुरी - सोनगढ़

तीर्थधाम चिदायतन में

श्री 1008 शान्तिनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव

(रविवार, 1 दिसम्बर से शुक्रवार, 6 दिसम्बर 2024)

मङ्गल आमन्त्रण

आदरणीय सत्धर्म प्रेमी साधर्मीजन,

सादर जयजिनेन्द्र !

समस्त जिनधर्मभक्तों को जानकर हर्ष होगा कि परमोपकारी वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु की अनुकम्पा से, पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के पुण्य प्रभावनायोग में, अखिल विश्व की आश्चर्यकारी, परमपवित्र तपोभूमि-हस्तिनापुर की पुण्यधरा पर, **तीर्थधाम चिदायतन** का अवतरण हो रहा है।

हस्तिनापुर वह गौरवशाली ऐतिहासिक एवं पौराणिकनगरी है, जहाँ पर तीन-तीन तीर्थंकरों (भगवान शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ एवं अरनाथ) के चार-चार कल्याणक हुए हैं। साथ ही यह पौराणिक स्थल भगवान मल्लिनाथ के समवसरण, भगवान आदि के प्रथम आहारदान तथा विष्णुकुमार के द्वारा अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनिराज पर हुए उपसर्ग निवारण का साक्षी रहा है। यह नगरी, जैन महाभारत के महानायक पाण्डवों एवं कौरवों की प्रसिद्ध राजधानी रही है। प्रतिवर्ष धर्मनगरी हस्तिनापुर में विश्व के अलग-अलग कोनों से लाखों की संख्या में दर्शनार्थी पधारते हैं।

इस संकुल के सम्बन्ध में देश के ख्यातिप्राप्त विद्वानों, श्रेष्ठियों एवं साधर्मियों ने अपनी हार्दिक अनुमोदना प्रदान कर हमारा उत्साहवर्धन किया है।

इस महान धार्मिक प्रकल्प **तीर्थधाम चिदायतन** में भगवान श्री शान्तिनाथ चिदेश जिनालय; श्री गन्धकुटी चौबीसी चिदेश जिनालय का भव्य **पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव रविवार, 1 दिसम्बर से शुक्रवार, 6 दिसम्बर 2024** तक होना निश्चित हुआ है। आप सब इस महामहोत्सव में सादर आमन्त्रित हैं।

आइये, तीर्थधाम चिदायतन संकुल निर्माण की अनुमोदना एवं हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र के दर्शन कर अपना जीवन धन्य करें।

——: सम्पर्कसूत्र :——

पण्डित सुधीर शास्त्री, मोबा. 97566 33800

श्री नवनीत जैन, नोएडा, मोबा. 8171012049

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-24, अङ्क-1 (वी.नि.सं. 2550; वि.सं. 2080) जनवरी 2024

प्रभु वीतराग मुद्रा तेरी...

प्रभु वीतराग मुद्रा तेरी, कह रही मुझे निधि मेरी है।
हे परमपिता त्रैलोक्यनाथ, मैं करूँ भक्ति क्या तेरी है ॥1 ॥

ना शब्दों में शक्ति इतनी, जो वरण सके प्रभु वैभव को।
बस मुद्रा देख हरष होता, आतम निधि जहाँ उकेरी है ॥2 ॥

इससे दृढ़ निश्चय होता है, सुख ज्ञान नहीं है बाहर में।
सब छोड़ स्वयं में रम जाऊँ, अन्तर में सुख की ढेरी है ॥3 ॥

नहिं दाता हर्ता कोई है, सब वस्तु पूर्ण हैं निज में ही।
पूर्णत्व भाव की हो श्रद्धा, फिर नहीं मुक्ति में देरी है ॥4 ॥

साभार : मङ्गल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़
सम्पादक
डॉ. जयन्तीलाल जैन, मङ्गलायतन वि०वि०
सह सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन
सम्पादक मण्डल
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून
सम्पादकीय सलाहकार
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन
मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन

क्या - कहाँ

चरणानुयोग	शासननायक का अनन्त उपकार	5
द्रव्यानुयोग	समयसार नाटक	10
	स्वानुभूतिदर्शन :	16
प्रथमानुयोग	हस्तिनापुर का अतिशयकारी	19
करणानुयोग	जानिये, णमोकार मन्त्र	21
प्रथमानुयोग	कवि परिचय	24
करणानुयोग	श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान	25
द्रव्यानुयोग	बालवाटिका	28
	जिस प्रकार-उसी प्रकार	29
	समाचार-दर्शन	30

शुल्क :
एक प्रति : 07.00 ₹
आजीवन (15 वर्ष) : 1000.00 ₹

चरणानुयोग

(बहिनश्री के वचनामृत क्रमाङ्क 432 पर सत्पुरुषश्री कानजीस्वामी का प्रवचन)

शासननायक का अनन्त उपकार

गणधर श्री गौतमस्वामी शुद्धोपयोग भूमिका को प्राप्त तो थे ही। ज्यों ही भगवान का मोक्ष हुआ, वहाँ तुरन्त ही वे अन्तर में—सम्यक्त्व के ध्येयरूप पूर्णानन्द आदि सामर्थ्य से भरपूर ज्ञायक ध्रुवधाम में—स्थिरतापरिणति में गहरे उतर गये और उसी दिन पूर्ण वीतरागदशा प्राप्त करके केवलज्ञान को प्राप्त हुए।

आत्मा के स्वक्षेत्र में रहकर लोकालोक को जाननेवाला आश्चर्यकारी, स्व-परप्रकाशक प्रत्यक्षज्ञान उन्हें प्रगट हुआ, आत्मा के असंख्य प्रदेशों में आनन्दादि अनन्त गुणों की अनन्त पूर्ण पर्यायें प्रकाशमान हो उठीं।

स्व-पर यथातथ प्रकाशक स्वानुभूतिसहित मति-श्रुतज्ञान तो उनको पहले से प्रगट हुआ है; यह तो पूर्ण ज्ञान की बात है। द्रव्य और गुण से तो भगवान आत्मा तीनों काल परिपूर्ण है; पर्याय में जो अपूर्णता थी, वह वीतरागता और केवलज्ञान प्राप्त होने पर निकल गयी। आत्मा का स्वक्षेत्र असंख्यप्रदेशी है; उसमें ज्ञान और आनन्दादि अनन्त गुण विद्यमान हैं। अनन्त गुणों को रहने के लिये अनन्त प्रदेश की आवश्यकता नहीं है। आत्मा के असंख्य प्रदेश में एकसाथ रहनेवाले ज्ञान एवं आनन्दादि अनन्त गुणों की प्रति समय होनेवाली अनन्त पूर्ण पर्यायें प्रकाशित हो उठीं। नीचे सम्यग्दर्शन होने पर 'सर्वगुणांश सो सम्यक्त्व' — इस न्याय से सम्यक्त्व, ज्ञान और आनन्दादि सर्व गुणों की पर्यायें प्रकाशित अवश्य हो उठी हैं, परन्तु अंशत: और वेदन में भी अल्प; मुनिवरों को भी प्रगट अवश्य हुई हैं परन्तु प्रमाण में विशेष और वेदन में अत्यन्त प्रचुर और केवली के तो अनन्त गुणों की अनन्त पर्यायें प्रमाण में तथा वेदन में परिपूर्णरूप से प्रकाशित हो उठी हैं।

गौतमस्वामी को अन्तर की गहराई में उतर जाने पर, आत्मा के स्वक्षेत्र में रहकर लोकालोक को जाननेवाला स्व-पर प्रकाशक अद्‌भुत ज्ञान प्रगट हुआ, आत्मा के असंख्य प्रदेशों में अनन्त गुणों की अनन्त पूर्ण पर्यायें खिल उठीं।

अभी इस पञ्चम काल में भरतक्षेत्र में तीर्थङ्कर भगवान का विरह है, केवलज्ञानी भी नहीं हैं।

भरतक्षेत्र में इस समय पञ्चम काल वर्त रहा है, तीर्थङ्कर या सामान्य केवली हों — ऐसा योग इस काल में नहीं है।

महाविदेहक्षेत्र में कभी तीर्थङ्कर का विरह नहीं होता, सदैव धर्मकाल वर्तता है।

विदेहक्षेत्र में श्री सीमन्धरस्वामी आदि बीस तीर्थङ्कर भगवन्त तो सदैव होते हैं। वहाँ तीर्थङ्कर और केवलियों का कभी विरह नहीं होता, सदा धर्मकाल प्रवर्तता है। प्रकृति का नियम है कि छह महीना और आठ समय में छह सौ आठ जीव नियम से मोक्ष जाते हैं। भरतक्षेत्र से वर्तमान काल में कोई मोक्ष नहीं जाता, तो कहाँ से जाते हैं ? — विदेहक्षेत्र से। वहाँ सदा धर्मकाल वर्तता है। अपने पण्डितजी ने — बहिनश्री चम्पाबेन के भाई हिम्मतभाई ने, जो समवसरण स्तुति बनायी उसमें कहा है न! कि —

धर्मकाल अहो! वर्ते, धर्मक्षेत्र विदेह में;
बीस बीस जहाँ गर्जे, धोरी धर्मप्रवर्तका।

आज भी वहाँ भिन्न-भिन्न विभागों में एक-एक तीर्थङ्कर मिलाकर बीस तीर्थङ्कर विद्यमान हैं।

जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड और पुष्करार्ध द्वीप—यह ढाई द्वीप—45 लाख योजन प्रमाण मनुष्यक्षेत्र है। उसमें कुल पाँच विदेहक्षेत्र हैं। पाँच मेरु की पूर्व-पश्चिम दिशाओं में स्थित प्रत्येक विदेहक्षेत्र के सोलह-सोलह 'विजय' (देश) हैं। इस प्रकार विदेहक्षेत्र के कुल 160 विभाग हैं। आज भी वहाँ भिन्न-भिन्न विभागों में एक-एक तीर्थङ्कर मिलाकर बीस तीर्थङ्कर विद्यमान हैं। विदेहक्षेत्र में बीस तीर्थङ्कर तो सदा होते हैं परन्तु किसी समय

प्रत्येक विभाग में तीर्थङ्कर हों तो एकसाथ 160 तीर्थङ्कर भी होते हैं।

वर्तमान में विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती विजय में श्री सीमन्धरनाथ विचर रहे हैं और समवसरण में विराजकर दिव्यध्वनि के स्त्रोत बहा रहे हैं।

जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र के पुष्कलावती विजय में श्री सीमन्धर भगवान वर्तमान में विराज रहे हैं; परमौदारिक शरीर है, 500 धनुष (2000 हाथ) ऊँची देहयष्टि है, एक करोड़ पूर्व की आयु है। (70 लाख, 56हजार करोड़ वर्ष का एक पूर्व होता है)। केवलज्ञानादि अनन्त चतुष्टय के धारी भगवान समवसरण में विराजकर दिव्यध्वनि के धोध बहा रहे हैं। भगवान की धर्मदेशना 'ॐ' कार दिव्यध्वनिमय होती है, उनको हमारी तरह क्रम से निकलनेवाली भाषा नहीं होती, होंठ बन्द होते हैं; समस्त शरीर से 'ॐ' ध्वनि का मधुर नाद उठता है, और उनका अतिशय ऐसा होता है कि सभाजन अपनी-अपनी भाषा में देशना का भाव समझ जाते हैं।

ॐ कार धुनि सुनि अर्थ गणधर विचारै,
रचि आगम उपदेशै, भविकजीव संशय निवारै।

इस प्रकार अन्य विभागों में अन्य तीर्थङ्कर भगवन्त विचर रहे हैं।

अरेरे! लोगों को विश्वास कहाँ है? अन्य विजय में भी वर्तमान में तीर्थङ्कर विचरते हैं। श्री सीमन्धरादि बीस नामों वाले तीर्थङ्कर भगवान विदेहक्षेत्र में (काल-क्रम में नवीन-नवीन होकर) सदैव होते हैं। जगत में तीनों काल-तीनों लोक के (लोकालोक सर्व के) ज्ञाता सर्वज्ञ वीतराग अरहन्त परमात्मा का कभी विरह नहीं होता। ***जगत में यदि 'ज्ञेय' सदा है तो उसको पूर्णरूप से जाननेवाले और जानकर दिव्यध्वनि द्वारा बतलानेवाले सशरीर परमात्मा भी सदा होते हैं, उनका विरह कभी नहीं हो सकता।*** भले ही वर्तमान में भरतक्षेत्र में तीर्थङ्कर नहीं हैं परन्तु विदेहक्षेत्र में तो सदा होते हैं; क्योंकि वहाँ सदा धर्मकाल वर्तता है।

यद्यपि वीर भगवान निर्वाण पधारे हैं, तथापि इस पञ्चम काल में इस भरतक्षेत्र में वीर भगवान का शासन प्रवर्त रहा है, उनका उपकार वर्त रहा है।

वीर भगवान इस समय 'णमो सिद्धाणं'—अशरीरी सिद्ध परमात्मारूप से लोकाग्र में विराजते हैं, तथापि इस भरतक्षेत्र में वर्तमान में उनका शासन प्रवर्त रहा है।

मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्॥

शासननायक वीतराग-सर्वज्ञ श्री महावीर भगवान का उपकार वर्तमान में इस भरतक्षेत्र में वर्त रहा है।

वीरप्रभु के शासन में अनेक समर्थ आचार्य भगवान हुए, जिन्होंने वीर भगवान की वाणी के रहस्य को विविध प्रकार से शास्त्रों में भर दिया है।

महावीर भगवान के शासन में ज्ञान-तप-ऋद्धिधारी समर्थ दिगम्बर सन्त-आचार्य भगवन्त हुए। दो हजार वर्ष पहले सनातन दिगम्बर जैन के श्रमणधर्म से भ्रष्ट होकर वस्त्र-पात्रधारी जो दूसरा पंथ निकला है, वह वास्तव में वीरप्रभु का मार्ग नहीं है। सूत्रपाहुड़ में भगवत्कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने उन्हें उन्मार्गी कहा है —

नहिं वस्त्रधर सिद्धि लहै, वह होय तीर्थङ्कर भले,
बस नग्न मुक्तिमार्ग है, शेष सब उन्मार्ग हैं॥

सच्चे भावलिङ्गी आचार्य, उपाध्याय अथवा साधु तो शुद्धोपयोग भूमिका को प्राप्त होते हैं। षट् खण्डागम की धवला टीका में 'णमो लोए सव्वसाहूणं' में जो 'लोए' और 'सव्व' शब्द हैं, वे अन्तदीपक होने से पूर्व के चारों पदों में लागू होते हैं—ऐसा कहा है और उसकी टीका करते हुए कहा है—लोक में त्रिकालवर्ती सर्व अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधुओं को नमस्कार हो।

श्रेणिकराजा भावी-तीर्थङ्कर हैं, वर्तमान में 84000 वर्ष की स्थिति से प्रथम नरक में हैं, वहाँ से निकलकर जम्बूद्वीप के इस भरतक्षेत्र की अगली-

भविष्य की चौबीसी के प्रथम तीर्थङ्कर होनेवाले हैं। उनके भावी अरहन्तपने को अभी से नमस्कार हो सकता है।

वीरप्रभु के शासन में शुद्धोपयोग भूमिका को प्राप्त अनेक महासमर्थ आचार्य भगवन्त हुए, जिन्होंने वीर भगवान की वाणी के विविध रहस्यों को अनेक शास्त्रों में भर दिया है।

श्री कुन्दकुन्दादि समर्थ आचार्य भगवन्तों ने दिव्यध्वनि के गहन रहस्यों से भरपूर परमागमों की रचना करके मुक्ति का मार्ग अद्‌भुत रीति से प्रकाशित किया है।

श्री कुन्दकुन्द के साथ जो 'आदि' शब्द है, उसमें से दिगम्बर भावलिङ्गी सन्त लेना; अन्य वस्त्र-पात्रधारी नहीं। उन्होंने तो, भगवान का नाम देकर कल्पित शास्त्र रचे हैं — महावीर भगवान के दो पिता और दो माताएँ; अर्जुन की पत्नी महासती द्रौपदी के पाँच पति आदि अनेक कल्पित बातें लिखी हैं। उन मार्गभ्रष्ट गुरुओं को तथा उन कल्पित शास्त्रों को मानना, वह गृहीतमिथ्यात्व है। 'आदि' शब्द में श्री उमास्वामी, कार्तिकेयस्वामी, पूज्यपादस्वामी, समन्तभद्र, नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती, अमृतचन्द्र, योगीन्दुदेव आदि दिगम्बर आचार्य भगवन्त लेना। आकाशस्तम्भ समान उन समर्थ आचार्य भगवन्तों ने वीरप्रभु की वाणी के मर्म को विविध प्रकार से शास्त्रों में भरकर अद्‌भुत रीति से मुक्तिमार्ग का प्रकाशन किया है।

श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने विक्रम शक के प्रारम्भ में (संवत 49 में) पूर्व विदेहक्षेत्र में जाकर भगवान श्री सीमन्धरस्वामी की दिव्यध्वनि का साक्षात् श्रवण किया था। वहाँ आठ दिन रहकर केवली-श्रुतकेवली के सत्समागम का लाभ लिया था। वहाँ से आकर उन्होंने इन समयसार, प्रवचनसार, पञ्चास्तिकायसंग्रह, नियमसार, अष्टप्राभृत आदि शास्त्रों की रचना की है। इस प्रकार श्री कुन्दकुन्दादि समर्थ दिगम्बर सन्तों ने वीर मुखोद्‌गत दिव्यध्वनि के गम्भीर रहस्यों से भरपूर परमागमों की रचना करके मोक्ष का मार्ग अद्‌भुत रीति से प्रकाशित किया है।●●

द्रव्यानुयोग

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

कर्त्ता कर्म क्रिया द्वार प्रवचन

साधु ने तो मोक्षतत्त्व में प्रवेश कर लिया है; परन्तु जो सम्यग्दृष्टि होता है उसको भी अपना अखण्ड-अभेद पूर्ण स्वभावी भगवान आत्मा अनुभव में और प्रतीति में आने लगता है, इसकारण बंध का विलास दूर होने लगता है। मैं बंध से बँधा नहीं हूँ, मैं तो अबंधस्वभावी हूँ- ऐसी दृष्टि हो गई- इतनी मुक्ति सम्यग्दर्शन में ही हो जाती है। 'आत्म शक्ति' कहकर एक शक्ति नहीं, परन्तु अनन्त शक्तिवंत सम्पूर्ण आत्मा दृष्टि में लिया, उसने सम्पूर्ण जगत को जीत लिया है। दुनिया की कोई वस्तु तो मेरी है ही नहीं; परन्तु यह रागादिभाव भी मेरा नहीं है- ऐसा विवेक जागृत हो गया। मिथ्यात्व का नाश हुआ, बंध दूर हुआ और सम्यग्ज्ञान का प्रकाश हुआ, समकित की प्राप्ति हुई। बंध के जो कोई और जितने विकल्प आते है वे मैं नहीं और वे मेरे नहीं; मैं तो उनका जाननेवाला हूँ।

मैं तो अनादि-अनन्त अबंधस्वभावी हूँ। मेरे में बंध है ही नहीं। बंध को 'मेरा' मानना ही मिथ्यात्व है। अज्ञानी को, अपना प्रभु कितना महान है, कैसा है- इसका पता नहीं है और धर्म करना है; परन्तु धर्म का करनेवाला धर्मी कितना महान है, कैसा है इसके परिज्ञान बिना धर्म कहाँ से होगा ?हम अणुव्रत पालते हैं, महाव्रत पालते हैं इसमें धर्म मानता है, वह तो मिथ्यात्व पालता है, धर्म नहीं पालता। कारण कि आत्मा आस्रव और बंध तत्त्व से तो भिन्न है। आत्मा को आस्रव-बंध से सहित मानना तो मिथ्यात्व है।

आत्मशक्ति अर्थात् अनन्त शक्ति के पिंडरूप आत्मा का जिसने सहारा लिया, उसको बंध का विलास छूट जाता है। अस्थिरता का राग है, उतना बंध है; उसे ज्ञान में जानता है; परन्तु ज्ञानी उसको 'मेरा है' ऐसा नहीं मानता। मैं तो अबंधस्वभावी हूँ, मेरे में बंध है ही नहीं- ऐसी दृष्टि होने पर अबंध में रहे हुए

आनन्द का अनुभव हुए बिना नहीं रहता। दु:ख मिटकर आनन्द का वेदन होता है।।

इस प्रकार यह 10 वाँ कलश (11 वाँ पद) हुआ। अब 11 वें कलश का 12 वाँ पद कहते हैं।

जैसा कर्म वैसा कर्त्ता :-

सुद्धभाव चेतन असुद्धभाव चेतन,
दुहूंकौ करतार जीव और नहि मानिये।
कर्मपिंडकौ विलास वर्न रस गंध फास,
करता दुहूंकौ पुदगल परवानिये॥
तातै वरनादि गुन ग्यानावरनादि कर्म,
नाना परकार पुदगलरूप जानिये।
समल विमल परिनाम जे जे चेतन के,
ते ते सब अलख पुरुष यौं बखानिये॥12॥

अर्थ:- शुद्ध चैतन्यभाव और अशुद्ध चैतन्यभाव दोनों भावों का कर्त्ता जीव है, दूसरा नहीं है। द्रव्यकर्म-परणति और वर्ण, रस, गंध, स्पर्श इन दोनों का कर्त्ता पुद्गल है; इससे वर्ण रसादि गुण सहित शरीर और ज्ञानावरणादि कर्म-स्कंध इन्हें अनेक प्रकार की पुद्गल पर्यायें जानना चाहिये। आत्मा के शुद्ध और अशुद्ध जो, जो परिणाम हैं वे सब अमूर्तीक आत्मा के हैं, ऐसा परमेश्वर ने कहा है॥12॥

काव्य - 12 पर प्रवचन

सम्यग्दर्शन ज्ञानभाव का कर्त्ता जीव है और अज्ञानदशा में पुण्य-पाप रागादि करता है, उनका कर्त्ता भी जीव है। कर्म कभी भी जीव के परिणामों को नहीं करता। शुद्धभाव हो अथवा अशुद्धभाव हो, इन दोनों भावों का कर्त्ता जीव है। अज्ञानदशा में जीव अशुद्धभाव को करता है; परन्तु जीव परद्रव्य के भाव को तो करता ही नहीं है। इसकारण कर्म के परिणाम को, उपदेश को अथवा अन्य के लाभ-नुकसान के परिणाम को जीव नहीं कर सकता। मैं

उपदेश देकर दूसरों का भला करता हूँ– यह तो मिथ्यात्व है। मैं उपदेश देकर दूसरों को सुधार दूँ –ऐसा माननेवाला मूढ़ मिथ्यादृष्टि है।

आत्मा कर्म का कर्त्ता नहीं है और कर्म आत्मा के विकार का कर्त्ता नहीं है। जीव में कर्म का संग करने से अशुद्धभाव होता है; परन्तु उसका कर्त्ता कर्म नहीं है, जीव स्वयं ही अशुद्धभाव करता है। अशुद्धभाव होने में कर्म का निमित्त है; परन्तु कर्त्ता जीव स्वयं है। इसीलिए 'पंचास्तिकाय' में जीव को 'प्रभु' कहा है; क्योंकि उसको अपने विकारी अथवा अविकारी परिणाम करने में किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं है, इसलिए आत्मा प्रभु है; तथापि अशुद्धभाव में कर्म का और शुद्धभाव में कर्म के अभाव का निमित्त होने से दोनों भावों को इस अपेक्षा से कर्म जनित भी कहते हैं; परन्तु वास्तविक दृष्टि से विकार करने में, अविकारी होने मे जीव स्वयं ही स्वतन्त्र रूप से कर्त्ता है, उसको अन्य किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं है।

अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव भी अपनी मर्यादा छोड़कर पर में तो कुछ कर सकता ही नहीं है। जीव अपने द्रव्य–गुण–पर्याय से बाहर जा ही नहीं सकता, तो जीव बाहर में क्या कर सकता है? सामायिक करे, प्रोषध करे, श्रावक–श्राविका बनावे, साधु–साध्वियों के समूह बनावे यह सब मैं करता हूँ– ऐसा अज्ञान से मानता और मनाता है; परन्तु जीव अपनी मर्यादा से बाहर निकलकर पर का कुछ नहीं करता।

अहा..! यह तो दुनिया से अलग प्रकार की बात है। दुनिया को जीतने का यह एक ही उपाय है। अज्ञानपने से दुनिया को नहीं जीता जा सकता। (संसार का अभाव नहीं किया जा सकता।) अज्ञानी अज्ञानपने राग और विकार का कर्त्ता होता है; परन्तु जीव पर का कार्य तो अज्ञानपने भी नहीं कर सकता। दया, दान, व्रत, तपादि शुभभाव हैं वे भी अशुद्धभाव हैं। उसको अज्ञानी करता है; परन्तु ज्ञानी तो अशुद्धभाव को नहीं करता। ज्ञानी तो अपने ज्ञानभाव का ही कर्त्ता होता है।

अपनी पर्याय की मर्यादा छोड़कर पर का कार्य करे –ऐसा किसी भी द्रव्य की सत्ता का स्वभाव नहीं है। कोई ऐसा अभिमान करता है कि मेरे पास पैसा नहीं है, परन्तु मैं उपदेश ऐसा देता हूँ कि करोड़ों रुपये का दान इकट्ठा हो जाता है, तो ऐसा अभिमान करनेवाला मूढ़ है। जीव जड़ की क्रिया का कर्त्ता अपने को मानता है, वह अपनी आत्मा पर छुरी चलाता है। आत्मा तो 'ज्ञाता' है, उसके बदले ज्ञाता नहीं रहकर विकल्प करता है; परन्तु जड़ की क्रिया को तो आत्मा करता ही नहीं।

लोगों को ऐसा लगता है कि यह बात सोनगढ़ की नई निकली है; परन्तु यह तो वस्तु के स्वरूप की शास्त्र कथित बात है। सोनगढ़ का पंथ निराला है; परन्तु घर का निकाला हुआ पंथ नहीं है। यह तो सर्वज्ञ–वीतराग के घर का निराला पंथ है।

जीव, जीव की पर्याय को करता है, वैसे ही पुद्गल पुद्गल की पर्याय को करता है। कर्म की अवस्था को पुद्गल करता है और वर्ण, रस, गंध स्पर्श की अवस्था को भी पुद्गल करता है। यह शरीर के बोलने–चलने इत्यादि की क्रिया होती है, उसको शरीर करता है, जीव नहीं करता। आत्मा अज्ञानभाव से भी उसको नहीं करता। ज्ञानावरणादि कर्म की और शरीर की अनेक अवस्थाओं को पुद्गल करता है। आत्मा पुद्गल की क्रिया को बिलकुल नहीं करता।

'समल–विमल परिनाम जे जे चेतन के' –समल अर्थात् राग–द्वेषादि मलिन परिणाम और विमल अर्थात् निर्मल परिणाम इन दोनों का कर्त्ता जीव स्वयं है। स्वभाव का आश्रय ले तो निर्मल परिणाम करता है, वह भी आत्मा ही करता है। इसके अतिरिक्त आत्मा अन्य द्रव्य के परिणाम को अज्ञान में भी नहीं करता। यह वस्तु–मर्यादा है।

अब कहते हैं कि मिथ्यादृष्टि भेदज्ञान का रहस्य नहीं जानता। यह बात समझने के लिये दृष्टान्त देते हैं–

भेदज्ञान का मर्म मिथ्यादृष्टि नहीं जानता, इस पर दृष्टान्तः-

जैसैं गजराज नाज घासके गरास करि,
भच्छत सुभाय नहि भिन्न रस लीयौ है।
जैसैं मतवारौ नहि जानै सिखरनि स्वाद,
जुंगमें मगन कहै गऊ दूध पीयौ है॥
तैसैं मिथ्यादृष्टि जीव ग्यानरूपो है सदीव,
पग्यौ पाप पुन्नसौं सहज सुन्न हीयौ है।
चेतन अचेतन दुंहूकौ मिश्र पिंड लखि,
एकमेक मानै न विवेक कछु कीयौ है॥13॥

अर्थः- जैसे हाथी अनाज और घास का मिला हुआ ग्रास खाता है, पर खाने ही का स्वभाव होने से जुदा जुदा स्वाद नहीं लेता; अथवा जिस प्रकार मद्य से मतवाले को श्रीखण्ड खिलाया जावे, तो वह नशे में उसका स्वाद न पहिचानकर कहता है कि इसका स्वाद गौदुग्ध के समान है, उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि जीव यद्यपि सदा ज्ञानमूर्ति है, तो भी पुण्य-पाप में लीन होने के कारण उसका हृदय आत्मज्ञान से शून्य रहता है, इसके चेतन-अचेतन दोनों के मिले हुए पिण्ड को देखकर एक ही मानता है और कुछ विचार नहीं करता।

भावार्थः- मिथ्यादृष्टि जीव स्व-पर विवेक के अभाव में पुद्गल के मिलाप से जीव को कर्म का कर्त्ता मानता है ॥13॥

काव्य - 13 पर प्रवचन

आत्मा अतीन्द्रिय आनन्दस्वरूप है, सत्चिदानन्द प्रभु ज्ञान और आनन्द का समुद्र है, शाश्वत है और पुण्य-पाप के विकल्प उत्पन्न होते हैं, वे तो दुःखरूप हैं-राग है-विकार है; परन्तु अज्ञानी अनादि से आत्मा और राग के भेद को जानता ही नहीं, वह तो दोनों को एक ही समझता है।

जैसे राज्य के लोग हाथी को खाने के लिए चूरमा देते हैं तो वह तो उसे घास में मिलाकर खा जाता है। उसको घास और चूरमा के भेद का पता नहीं है-इस कारण उसको घास और चूरमा का भिन्न स्वाद नहीं आता है। इसी

प्रकार शराब पीकर मस्त बने हुए व्यक्ति को श्रीखण्ड खिलाया जाये तो वह नशे में उसका स्वाद नहीं जानता है। नशे के जोर में मग्न बने हुए व्यक्ति को श्रीखण्ड का खट्टा-मीठा स्वाद ख्याल में नहीं आता है, उसे तो मैं गाय का दूध पीता हूँ ऐसा लगता है।

यह तो दो दृष्टान्त कहे। इसीप्रकार मिथ्यादृष्टि जीव चूरमा के समान सदा ज्ञायकमूर्ति अपना आत्मा और घास के समान पुण्य-पाप के विकल्प को भिन्न नहीं जानता होने से पुण्य-पाप में ही लीन होने के कारण उसका हृदय आत्मज्ञान से शून्य रहता है। इसकारण वह चेतन-अचेतन दोनों के मिले हुए पिण्ड को देखकर एक ही मानता है।

आत्मा तो ज्ञानमूर्ति आनन्दमय चैतन्यमूर्ति है और पुण्य-पाप तो दु:खरूप है, आकुलतामय है, जहर है। आत्मा तो त्रिकाल ज्ञानघन है; परन्तु अज्ञानी ने आत्मा के स्वरूप को जाना नहीं है और अनादि से पुण्य-पाप के भाव को ही अपना स्वरूप माना है। इसकारण अज्ञानी उनमें ही लीन हो रहा है। जैसे शराबी मनुष्य नशे में लीन है; वैसे ही यह पुण्य-पाप में लीन है। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह आदि पाप परिणाम और अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह आदि पुण्य परिणाम को अपना स्वरूप मानकर सेवन करता है। भले ही वह साधु हुआ हो, बाहर से त्यागी हुआ हो; परन्तु यह शुभराग आत्मा का स्वभाव नहीं है, जहर है, राग है ऐसा वह नहीं मानता। उसकी दृष्टि अपने ज्ञानानन्दस्वभाव पर तो गई नहीं और पुण्य-पाप परिणाम में ही लीन है, वह वास्तव में अजीव में लीन है, जीव में लीन नहीं है।

'पग्यौ पाप पुन्न सौं सहज सुन्न हीयौ है' -अव्रत के भाव पापविकार हैं और व्रत के भाव पुण्यविकार हैं। अज्ञानी इन दोनों विकारों में ही लीन है। उसको ज्ञान और आनन्द स्वरूप जीव का तो पता ही नहीं है। इसकारण उसका हृदय आत्मज्ञान से शून्य है। उसको ज्ञान के आनन्द का पता ही नहीं है। पुण्य-पाप ही मेरा जीवन है, पुण्य-पाप की क्रिया ही मेरी क्रिया है और पुण्य-पाप का स्वाद ही मेरा स्वाद है- ऐसा वह मानता है।

क्रमशः

स्वानुभूतिदर्शन : बहिनश्री की तत्त्वचर्चा

प्रश्न :- 'द्रव्य उसे कहते हैं कि जिसके कार्य के लिए दूसरे साधनों की राह न देखना पड़े', इसे विशेष समझाने की कृपा करें।

समाधान :- द्रव्य को अन्य साधनों की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। दूसरों की प्रतीक्षा करनी पड़े तो वह द्रव्य काहे का? यदि उसके कार्य के लिये अन्य साधनों की प्रतीक्षा करनी पड़े तो वह द्रव्य स्वयं शक्तिहीन हो गया; परन्तु द्रव्य स्वयं अनन्त शक्तिसम्पन्न है; उसे साधनों की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती कि साधन नहीं हैं तो अब कैसे आगे बढ़ा जाये?—ऐसा उसे नहीं है, क्योंकि स्वयं परिणति करनेवाला द्रव्य है, इसलिए उसके कार्य की परिणति स्वयं ही होती है।

कुदरती द्रव्य स्वत:सिद्ध है। अन्य साधन हों तो द्रव्य अवस्थित रहे ऐसा नहीं होता, वह अनादि से स्वयं अपने से ही शाश्वत टिका हुआ है। उसकी परिणति के प्रत्येक कार्य में स्वयं स्वतन्त्र है। द्रव्य के आश्रय से सम्यग्दर्शन हो, ज्ञान की परिणति हो और लीनता बढ़े—यह सब परिणमन स्वयं अपने आप करनेवाला है। अपने परिणमन की गति, पुरुषार्थ की गति वह स्वयं ही करता है। उसकी परिणति हो उसमें साधन नहीं आये और साधनों की प्रतीक्षा करनी पड़े तो द्रव्य ही नहीं कहलाता। ऐसा पराधीन द्रव्य हो ही नहीं सकता। कुदरत में ऐसा द्रव्य होता ही नहीं। साधन स्वयं आकर उपस्थित हो जाते हैं, अपने को प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। अपने आप अपनी परिणति करनेवाला है।

ज्ञान का सम्पूर्ण चक्र स्वयं से ही चल रहा है; वह कर्म के कारण नहीं होता अथवा साधन नहीं मिले, इसलिए नहीं होता ऐसा नहीं है, परन्तु अपनी कषाय के कारण स्वयं अटका है। स्वयं पुरुषार्थ करे तो स्वयं आगे बढ़ता है। इसलिए उसके कार्य के लिए साधनों की जरूरत नहीं पड़ती। साधन के लिए रुकना पड़े तो वह द्रव्य ही नहीं है। ऐसा पराधीन द्रव्य हो ही नहीं सकता।

प्रश्न :- ज्ञानी पुरुष-अविरत सम्यग्दृष्टि दिन भर क्या करते होंगे? उन्हें पर में तो कुछ करना रहता नहीं है, तब समय कैसे व्यतीत करते होंगे? यह कृपया बतलाईये।

समाधान :- पर का कार्य करना हो तो समय व्यतीत हो ऐसा है नहीं। सम्यग्दृष्टि को अन्तर में ज्ञायक की परिणति प्रगट हुई है, ज्ञाता की धारा चलती है। उन्हें तो क्षण-क्षण पुरुषार्थ की डोर चल रही है, साधना की पर्याय होती है। प्रतिक्षण जो विभाव आयें उनसे भिन्न पड़कर ज्ञायक की धारा—ज्ञायक की परिणति-पुरुषार्थ की डोर—चल ही रही है। सहज ज्ञाताधारा चल रही है।

ज्ञानी दिनभर क्या करते होंगे? आत्मा का निवृत्त स्वभाव है; वह विभाव में अथवा कुछ बाहर का करे तो उसका समय व्यतीत हो ऐसा नहीं है। अन्तर के कर्त्ता-कर्म-क्रिया आत्मा में हैं। वह बाहर का कुछ कर ही नहीं सकता। मैं दूसरे का कुछ कर सकता हूँ ऐसा मात्र अभिमान जीव ने अज्ञान से किया है। ज्ञानी के अन्तर में आत्मा की स्वरूप परिणति की क्रिया का कार्य चल ही रहा है, प्रतिक्षण भेदज्ञान की धारा चल ही रही है। कभी-कभी विकल्प छूटकर स्वानुभूति प्रगट होती है, तथापि भेदज्ञान की धारा चलती ही रहती है। खाते-पीते, सोते हुए—स्वप्न में भी ज्ञायक की धारा चल रही है। यदि वे गृहस्थाश्रम में हैं इसलिए बाह्य कार्यों में जुड़ते हैं, परन्तु उनकी ज्ञाताधारा चलती रहती है। बाह्य में कार्य करते दिखायी देते हैं तथापि अन्तर से तो ज्ञायक ही रहते हैं। अन्तर में ज्ञायक हो गये और पर के कर्ता नहीं है इसलिए उनका समय व्यतीत नहीं होता ऐसा नहीं है। विभाव के कार्यों में संलग्न रहें तभी समय व्यतीत हो ऐसा नहीं है; वह तो आकुलता है। भीतर निवृत्तिमय एवं शान्तिमय परिणति में ही उन्हें सुख लगता है; बाहर कहीं सुख नहीं लगता।

मुनि अन्तर में तो अकर्ता हैं ही, परन्तु बाहर का भी सब छूट गया है।

तथापि शास्त्र में आता है कि मुनि कहीं अशरण नहीं हैं। बाह्य पंच महाव्रत के परिणाम शुभ हैं, उनसे भी उनकी परिणति भिन्न रहती है। छठ्ठे-सातवें गुणस्थान में झूलते मुनिराज क्षण-क्षण स्वरूप में लीन होते हैं। ऐसे मुनि कहीं अशरण नहीं हैं, उनको आत्मा की शरण प्रगट हुई है। मुनियों का सारा दिन कैसे बीतता होगा? इस प्रश्न का कोई अर्थ नहीं है। वे तो शुद्धात्मा में लीन रहते हैं, प्रचुर स्वसंवेदनपूर्वक आनन्द का वेदन करते हैं।

उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि को गृहस्थाश्रम में कार्य हो तथापि भीतर का कार्य—अन्तर की ज्ञाताधारा—चलती ही रहती है। प्रतिक्षण यह जो विभाव परिणति हो रही है, उससे भिन्न परिणति भी प्रतिक्षण चल ही रही है, वे कहीं अशरण नहीं हैं। जिसने आत्मा की शरण ली है, उसे तो आत्मा में ही सुख-शान्ति-स्वानुभूति का कार्य चलता है। आत्मा की निर्मलता विशेष प्रगट हो ऐसी विशेष पुरुषार्थ की डोर चल ही रही है।

सिद्ध भगवान को सब छूट गया है तो सिद्ध भगवान क्या करते होंगे? दिनरात क्या करते होंगे? सिद्धभगवान को अनन्तगुण-पर्यायें हैं, उन अनन्तगुण-पर्यायों में वे परिणमन करते रहते हैं। कर्ता-क्रिया-कर्म सब अन्तर में प्रगट हुआ है और वह सहज है, आकुलतारूप नहीं है। आतमा का निवृत्त स्वभाव पूर्ण प्रगट हुआ है। गुणों का कार्य चलता रहता है। ज्ञान ज्ञान का कार्य करता है, आनन्द आनन्द का कार्य करता है। इस प्रकार अनन्तगुण अनन्तगुणों का कार्य करते हैं, तथापि परिणति निवृत्तिमय है। सिद्ध भगवान निरंतर आत्मा में लीन रहते हैं, अद्‌भुत एवं अनुपमदशा में रहते हैं, और उसमें सन्तुष्ट हैं, तृप्ति और आनन्द है।

सम्यग्दृष्टि को कहीं बाहर जाने का मन नहीं होता, तथा किसी कार्य में कर्ताबुद्धि से जुटने का मन नहीं होता। अन्तर से स्वामित्वबुद्धिपूर्वक बाहर जाने की इच्छा नहीं होती; अस्थिरता से जाना होता है।

मुनियों के तो सब छूट गया है और निवृत्तिमय परिणति विशेष है;

शेष पृष्ठ 27 पर.....

प्रथमानुयोग

....गतांक से आगे

तीर्थधाम चिदायतन

हस्तिनापुर का अतिशयकारी इतिहास

धार्मिक नगरी हस्तिनापुर का वर्णन उत्तरपुराण से

उनके दोनों चरणों का पृष्ठभाग कछुए के समान था और यह पृथिवी उन्हीं का आश्रय पाकर निराकुल थी। जान पड़ता है कि 'पृथिवी कछुए के द्वारा धारण की गई है, यह रूढ़ि उसी समय से प्रचलित हुई है। उनके दोनों अंगूठे स्थूल थे, आगे के उठे हुए थे, अच्छी तरह स्थित थे, सुख की खान थे और ऐसे जान पड़ते थे मानो स्वर्ग तथा मोक्ष का मार्ग ही दिखला रहे हों। परस्पर में एक-दूसरे से सटी हुई उनकी आठों अँगुलियाँ ऐसी जान पड़ती थीं मानो आठों कर्मों का अपह्नव करने के लिए आठ शक्तियाँ ही प्रकट हुई हों। उनके चरणों का आश्रय लेनेवाले सुखकारी दश नख ऐसे सुशोभित होते थे, मानो उन नखों के बहाने उत्तम क्षमा आदि दशधर्म उनकी सेवा करने के लिए पहले से ही आ गये हों। हम भगवान के शरीर के अवयव हैं, इसीलिए इन्द्र आदि देव हम दोनों को नमस्कार करते हैं, यह सोचकर ही मानो नवीन पत्तों के समान उनके दोनों पैर रागी—रागसहित अथवा लालरंग के हो रहे थे। चन्द्रमा के साथ रात्रि का समागम रहता है और सूर्य उष्ण है। अतः ये दोनों ही उनके तेज की उपमा नहीं हो सकते। हाँ, इतना कहा जा सकता है कि उनका तेज भूषणांग जाति के कल्पवृक्ष के तेज के समान था। जबकि हजार नेत्रवाला इन्द्र-इन्द्राणी के मुखकमल से विमुख होकर उनकी ओर देखता रहता है, तब उनकी कान्ति का क्या वर्णन किया जावे? जिस प्रकार महामणियों से निबद्ध देदीप्यमान उज्ज्वल सुवर्ण सुशोभित होता है उसी प्रकार उनके शरीर के समागम से आभूषणों का समूह सुशोभित होता था।

अपने नाम के सुननेमात्र से ही जिन्होंने शत्रुरूपी हाथियों के समूह का मद सुखा दिया है, ऐसे राजाधिराज भगवान शान्तिनाथ का शब्द सिंह के

शब्द के समान सुशोभित होता था। उनकी कीर्तिरूपी लता जन्म से पहले ही लोक के अन्त तक पहुँच चुकी थी, परन्तु उसके आगे आलम्बन न मिलने से वह वहीं पर स्थित रह गई। उनके पिता ने कुल, रूप, अवस्था, शील, कला, कान्ति आदि से विभूषित सुख देनेवाली अनेक कन्याओं का उनके साथ समागम कराया था—अनेक कन्याओं के साथ उनका विवाह कराया था। प्रेमामृतरूपी जल से सींचे हुए स्त्रियों के नील कमलदल के समान नेत्रों से वे अपना हृदय बार-बार प्रसन्न करते थे। अपने मनरूपी धन को लूटनेवाली स्त्रियों की तिरछी चंचल लीलापूर्वक और आलस भरी चितवनों से वे पूर्ण सुख को प्राप्त होते थे। इस तरह देव और मनुष्यों के सुख भोगते हुए भगवान के जब कुमारकाल के पच्चीस हजार वर्ष बीत गये तब महाराज विश्वसेन ने उन्हें अपना राज्य समर्पण कर दिया। क्रम-क्रम से अखण्ड भोग भोगते हुए जब उनके पच्चीस हजार वर्ष और व्यतीत हो गये, तब तेज को प्रकट करनेवाले भगवान के साम्राज्य के साधन चक्र आदि चौदह रत्न और नौ निधियाँ प्रकट हुईं। उन चौदह रत्नों में से चक्र, छत्र, तलवार और दण्ड, ये आयुधशाला में उत्पन्न हुए थे, काकिणी, चर्म और चूड़ामणि श्रीगृह में प्रकट हुए थे, पुरोहित, स्थपति, सेनापति और गृहपति हस्तिनापुर में मिले थे और कन्या, गज तथा अश्व विजयार्ध पर्वत पर प्राप्त हुए थे।

पूजनीय नौ निधियाँ भी पुण्य से प्रेरित हुए इन्द्रों के द्वारा नदी और सागर के समागम पर लाकर दी गई थीं। इस प्रकार चक्रवर्ती का साम्राज्य पाकर दश प्रकार के भोगों का उपभोग करते हुए जब उनके पच्चीस हजार वर्ष और व्यतीत हो गये, तब एक दिन वे अपने अलंकार-गृह के भीतर अलंकार धारण कर रहे थे, उसी समय उन्हें दर्पण में अपने दो प्रतिबिम्ब दिखे। वे बुद्धिमान् भगवान आश्चर्य के साथ अपने मन में विचार करने लगे कि यह क्या है ? उसी समय उन्हें आत्मज्ञान उत्पन्न हो गया और मतिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशमरूप सम्पदा से वे पूर्व जन्म की सब बातें जानकर वैराग्य को प्राप्त हो गये। **(श्लोक, 442 से 463 तक)** **क्रमशः**

करणानुयोग

जानिये, णमोकार मन्त्र

णमोकार मन्त्र में वंदित पंच परमेष्ठियों के गुण —

अरिहन्तों के 46, सिद्धों के 8, आचार्यों के 36, उपाध्यायों के 25 और साधुओं के 28।

णमोकार महामन्त्र में 35 अक्षर हैं।

34 स्वर, 30 व्यंजन तथा 58 मात्रा होती हैं।

प्रथम पद में सात अक्षर।

दूसरे पद में पाँच अक्षर।

तीसरे पद में सात अक्षर।

चौथे पद में सात अक्षर।

पाँचवें पद में नौ अक्षर।

स्वर संख्या में से इकाई दहाई अलग-अलग किया जाये तो 310 हैं। व्यंजन और स्वर को जोड़ देने पर (34+30)=64 हैं। इस प्रकार 64 मूल वर्ण हैं।

9. माला में 108 दाने क्यों —

क्रोध, मान, माया, लोभ	मन, वचन, काय।
कृत, कारित, अनुमोदना।	समरम्भ, समारम्भ, आरम्भ।

इन चारों को (4x3x3x3) गुणा करने पर 108 आता है। इस प्रकार इन 108 प्रकार की कषायों से बचने का प्रतीक 108 दाने हैं।

ऊपर के 3 दाने—1. सम्यग्दर्शन, 2. सम्यग्ज्ञान, 3. सम्यक्चारित्र के प्रतीक हैं।

10. सौ इन्द्रों के नाम —

चालीस भवनवासी, बत्तीस व्यंतर, चौबीस कल्पवासी, दो ज्योतिष- एक सूर्य, एक चन्द्रमा, एक अष्टापद, एक चक्रवर्ती।

11. वातवलय का प्रमाण व रंग—

तीन वातवलय में 'घनोदधि वातवलय' गौमूत्र के समान वर्णवाला है।

'**घनवातवलय**' मूँग के समान रंगवाला है।

'**तनुवातवलय**' अनेक तरह के रंगवाला है।

ये तीनों वालवलय एक प्रकार की हवायें हैं।

वातवलयों का प्रमाण –

वातवलयों की मोटाई का वर्णन इस प्रकार जानना चाहिए –

लोक के बाहर के भाग में एक-एक वातवलय बीस-बीस हजार योजन मोटा है। तीनों वातवलयों की मोटाई साठ हजार योजन है। सातवें नरक के दोनों तरफ पार्श्व भाग से ऊपर मध्य लोक तक सात, पाँच और चार योजन क्रम से हैं अर्थात् पहला 'घनोदधि' सात योजन मोटा है। दूसरा 'घनवातवलय' पाँच योजन और तीसरा 'तनुवातवलय' चार योजन मोटा जानना चाहिए। आगे मध्य लोक में दोनों पार्श्व भाग में क्रम से तीन वातवलयों की मोटाई पाँच योजन, चार योजन और तीन योजन की है। पाँचवें ब्रह्म स्वर्ग के दोनों पार्श्व में तीनों वातवलय क्रम से सात योजन, पाँच योजन और चार योजन क्रम से मोटे हैं।

ब्रह्म स्वर्ग से ऊपर जाते हुए लोक के अन्तिम भाग में दोनों पार्श्व भाग में तीनों वातवलयों की मोटाई क्रम से पाँच योजन, चार योजन और तीन योजन, कुल बारह योजन है।

लोक के ऊपर शिखर पर चक्र के आकार '**घनोदधि**' वातवलय की मोटाई दो कोस, '**घनवातवलय**' की मोटाई एक कोस तथा '**तनुवात-वलय**' की मोटाई पन्द्रह सौ पिचहत्तर (1575) धनुष प्रमाण है। इस प्रकार तीनों वातवलयों की मोटाई जानना।

यह तीन लोक इन्हीं तीन वातवलयों के आधार पर खड़ा है। यह अनादि है, किसी ने बनाया नहीं है। छह द्रव्यों से भरा हुआ महान है।

12. नरकों के रूढ़िगत नाम : 1. धम्मा, 2. वंशा, 3. मेघा, 4. अंजना, 5. अरिष्टा, 6. मघवी, 7. माघवी।

13. नरकों में भूमियों के नाम : 1. रत्नप्रभा, 2. शर्कराप्रभा, 3. बालुकाप्रभा, 4. पंकप्रभा, 5. धूमप्रभा, 6. तमःप्रभा, 7. महातमःप्रभा।

14. रत्नप्रभा भूमि का विस्तार :

विशेष – 'रत्नप्रभा' नाम की पृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन की मोटी है। उसके तीन विभाग हैं।

उनमें से सोलह हजार योजन मोटा ऊपर का खर भाग है। उसमें चित्रा, वज्रा, वैडूर्य इत्यादि एक-एक हजार योजन की मोटी सोलह पृथ्वियाँ हैं। इनमें से ऊपर-नीचे की एक-एक हजार योजन की पृथ्वी छोड़कर बीच की चौदह हजार योजन मोटी एक राजू लम्बी चौड़ी पृथ्वी में किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, भूत और पिशाच इन सात प्रकार के व्यन्तर देवों के तथा नागकुमार, विद्युतकुमार, सुपर्णकुमार, अग्निकुमार, वातकुमार, स्तनितकुमार, उदधिकुमार, द्वीपकुमार और दिक्कुमार इन नौ प्रकार के भवनवासी देवों के निवास स्थान हैं।

'खर' भाग के नीचे चौरासी हजार योजन मोटा पंक भाग है। उसमें असुरकुमार और राक्षसों के निवास स्थान हैं। और पंकभाग के नीचे अस्सी हजार योजन मोटा 'अब्बहुल' भाग है। उसमें प्रथम नरक है। उसके नीचे एक अन्तराल राजू छोड़कर शर्कराप्रभादि पृथ्वी हैं। उन सबमें ही नारकियों के रहने के बिल अर्थात् निवास स्थान हैं। ये बिल किस-किस पृथ्वी में कितने-कितने हैं, यह बतलाने के लिए सूत्रकार कहते हैं।

15. नरकों के बिल :

इन रत्नप्रभादि सातों पृथ्वियों में तीस लाख, पच्चीस लाख, पन्द्रह लाख, दस लाख, तीन लाख, पाँच कम एक लाख और पाँच बिल हैं अर्थात् प्रथम पृथ्वी में तीस लाख, दूसरी पृथ्वी में पच्चीस लाख, तीसरी पृथ्वी में पन्द्रह लाख, चौथी पृथ्वी में दस लाख, पाँचवीं पृथ्वी में तीन लाख, छठी पृथ्वी में पाँच कम एक लाख और सातवीं पृथ्वी में पाँच बिल हैं। ये बिल गोल, त्रिकोण, चौकोर इत्यादि अनेक प्रकार के हैं। **क्रमशः**

प्रथमानुयोग

कवि परिचय

पण्डित दीपचन्द कासलीवाल

पण्डित दीपचन्द जाति से खण्डेलवाल तथा कासलीवाल गोत्र के थे। आप सांगानेर के निवासी थे। युवावस्था में ही आप जयपुर की राजधानी आमेर में आकर बस गये थे। वहीं पर रहकर आपने अधिकतर रचनाएँ लिखीं।

आपकी प्रसिद्धि दीपचन्द साधर्मी (भाई) के नाम से रही है। आप संस्कृत, प्राकृत के उच्च कोटि के विद्वान थे। आपने अनेक प्राचीन ग्रन्थों का सार ग्रहण कर तथा उनके उद्धरण देकर रचनाओं का निर्माण किया।

यद्यपि आपके जन्म तथा जीवन के संबंध में कोई विवरण नहीं मिलता है, फिर भी यह अनुमान किया जाता है कि आप पण्डित हेमराज पाण्डे के समय में जीवित रहे होंगे, क्योंकि उस युग के जयपुर राज्य के जैन साहित्यकारों ने काव्य-जगत में तथा विशेषरूप से हिन्दी खड़ी बोली के गद्य का अभूतपूर्व एवं महत्त्वपूर्ण विकास किया था।

कहा जाता है कि उन दिनों में जयपुर में लगभग एक सौ दिगम्बर जैन मन्दिर थे। अकेले जयपुर नगर में लगभग दस-बारह हजार जैनी निवास करते थे। उस समय राजा के दीवान प्राय: जैन होते थे। राव कृपाराम तथा शिवजीलाल उस युग के प्रसिद्ध दीवान हुए। प्रधान दीवान अमरचन्द (1810-1835) का नाम राजस्थान में चारों ओर विश्रुत था।

रचनाएँ —

आपके द्वारा रचित निम्न रचनाएँ उपलब्ध हैं —

1. आत्मावलोकन	2. चिद्विलास	3. अनुभवप्रकाश
4. परमात्मपुराण	5. सवैया-टीका	6. भावदीपिका
7. अनुभवानन्द	8. अनुभवविलास	9. स्वरूपानन्द
10. ज्ञानदर्पण	11. गुणस्थानभेद	12. उपदेशसिद्धान्तरत्न
13. अध्यात्मपच्चीसी	14. आरती	15. विनती

इनमें से सात रचनाएँ गद्य में रचित हैं और शेष आठ रचनाएँ पद्य में हैं।

करणानुयोग

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

अनुयोगों का वर्णन

आचार्य सोमदेव कहते हैं —

अनुयोगगुणस्थान - मार्गणास्थानकर्मसु।
अध्यात्मतत्त्वविद्याया: पाठ: स्वाध्याय उच्यते॥

अर्थात् चारों अनुयोगों के शास्त्र, गुणस्थान, मार्गणास्थान और अध्यात्म तत्त्वरूप विद्या का पढ़ना स्वाध्याय है। अनुयोग शब्द के कई पर्यायवाची हैं, उनमें प्रश्न, जिज्ञासा और उपदेश मुख्य है। '**प्रश्नोनुयोग: पृच्छा च**' अर्थात् प्रश्न, अनुयोग और पृच्छा - ये तीनों एकार्थवाची हैं।

प्रकरणवशात् अनुयोग पर विचार करना आवश्यक है। भगवान जिनेन्द्र की वाणी बिना इच्छा के खिरती है, क्योंकि इच्छा राग का रूप है और भगवान के राग हैं नहीं, तब स्वत: प्रश्न खड़ा होता है कि बिना इच्छा के वाणी कैसे खिरती है।

इसके उत्तर में स्वामी समंतभद्र कहते हैं—

अनात्मार्थं विना रागै: शास्ता शास्ति सतो हितम्।
ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शान्मुरज: किमपेक्षते॥

शास्ता अर्थात् उपदेश देनेवाले भगवान के अपने स्वयं के ख्याति, लाभ, पूजा आदि के बिना तथा शिष्यों के राग के बिना ही सत्पुरुषों (निकट भव्यों) के लिए हित का उपदेश होता है। वे किसी से कुछ भी नहीं चाहते, क्योंकि वे स्वयं कृत-कृत्य हैं, वीतरागी हैं और सर्वज्ञ भी हैं। जिस प्रकार हाथ के छूने से मृदंग के नाना स्वर स्वयं गूँज उठते हैं, क्या मृदंग उस वादक से कुछ अपेक्षा करता है ? कुछ भी नहीं करता, वह बिना इच्छा और अपेक्षा के बजता है। जैसे मेघ बिना इच्छा या स्नेह के बरस पड़ता है, वैसे ही भगवान की वाणी भी बिना अपेक्षा के ही भव्य जीवों के हितार्थ खिरती है।

अनुयोग शब्द का अर्थ जिज्ञासा भी है।

'ज्ञातुरिच्छा जिज्ञासा' अर्थात् जानने की इच्छा को जिज्ञासा कहते हैं। इस प्रसंग में जानने की इच्छा गणधरदेव के है। अनुयोग का अर्थ 'प्रश्न' भी है, अतः जिज्ञासु गणधरदेव के हृदय में उत्पन्न हुए प्रश्न भी अनुयोग कहे जाते हैं। कोश में अनुयोग का अर्थ उपदेश भी बताया है, जिससे स्पष्ट होता है कि गणधर देवों के द्वारा किए गए प्रश्नों के समाधान स्वरूप जो उपदेश भव्यों जीवों के हितार्थ उन्हें प्राप्त हुआ, उसको गणधरों ने जिन शीर्षकों अथवा परिच्छेदों में निबद्ध किया, उन्हें अनुयोग संज्ञा प्राप्त हुई।

समवायांग में अनुयोगों को बतलाते हुए कहते हैं—

अनुरूपोऽनुकूलो वा योगोऽनुयोगः सूत्रस्य।
निजे नाभिधेयेन सार्द्धमनुरूपः सम्बन्ध इत्यर्थः।

अर्थात् सूत्र द्वारा प्रतिपादित अर्थ के अनुकूल सम्बन्ध का नाम ही अनुयोग है। तात्पर्य यह है कि जिसमें सूत्र कथित सिद्धांत या नियमों के अनुकूल दृष्टान्त और उदाहरण पाए जायें, वह अनुयोग है।

इन अनुयोगों की संख्या चार मानी जाती है। प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग। क्रियाकलाप में समाधिभक्ति में कहा है—**'प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः'** ऐसा कहकर आचार्यों ने इन चारों अनुयोगों को नमस्कार भी किया है। समस्त द्वादशांग वाणी का सार इन चार अनुयोगों में ही निहित है। जिनेन्द्र भगवान के वचनों को विषय की दृष्टि से चार अनुयोगों में निबद्ध किया गया है। प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग।

अब प्रथमानुयोग का वर्णन करते हैं—

प्रथमानुयोग

आचार्य जिनसेन कहते हैं—

पदैः पञ्चसहस्रैस्तु प्रयुक्ते प्रथमे पुनः।
अनुयोगे पुराणार्थस्त्रिषष्टिरुपवर्ण्यते॥

अर्थात् दृष्टिवाद के तीसरे भेद अनुयोग में पाँच हजार पद हैं तथा

इसके अवांतर भेद प्रथमानुयोग में त्रेसठ शलाका पुरुषों के पुराण का वर्णन है।

नन्दी सूत्र की टीका में यह बतलाया है कि —

'इह मूलं धर्मप्रणयनात् तीर्थकरास्तेषां प्रथमः सम्यक्त्वाप्ति-लक्षणपूर्वभवादिगोचरोऽनुयोगो मूलः प्रथमानुयोगः।

इसका अभिप्राय यह है कि धर्म के प्रवर्तक होने से तीर्थंकर ही मूल पुरुष हैं, अतएव उनका प्रथम अर्थात् सम्यक्त्व प्राप्ति लक्षण पूर्व भव आदि का वर्णन करनेवाला अनुयोग मूल प्रथमानुयोग है।

आचार्य नेमिचन्द्र कहते हैं—

प्रथथ मिथ्यादृष्टिमव्रतिकमव्युत्पन्नं वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽधिकारः प्रथमानुयोगः।

इसका अभिप्राय यह है कि 'प्रथम' का तात्पर्य अव्रती और अव्युत्पन्न मिथ्यादृष्टि शिष्य से है और उसके लिए जिस अनुयोग की प्रवृत्ति होती है, वह प्रथमानुयोग कहलाती है। क्रमशः

....पृष्ठ 18 पर शेष

उसमें वे कहीं थकते नहीं हैं और बाहर निकलने का मन भी नहीं होता। मैं आत्मा में कैसे स्थिर रह जाऊँ, स्वानुभूति की दशा में क्षण-क्षण में बाहर आना पड़ता है, उसकी अपेक्षा अन्तर में शाश्वत कैसे रह जाऊँ ऐसी भावना मुनियों को होती है। उसी में उन्हें तृप्ति और आनन्द है। क्षण-क्षण में बाहर जाना पड़ता है, वह न जाना पड़े ऐसी उनकी भावना रहती है। आत्मा का स्थान छोड़कर बाहर जाना नहीं रुचता। अनन्त आनन्द-सुख का धाम आत्मा का उद्यान छोड़कर अन्यत्र कहीं बाहर जाने का मन नहीं होता। उनका पूरा समय आत्मा में ही व्यतीत होता है। और सम्यग्दृष्टि को ज्ञायक की धारा प्रगट है, पुरुषार्थ की डोर चल रही है; तब उनका समय कैसे बीतता होगा? यह प्रश्न ही नहीं रहता। इसी मार्ग से अनन्त जीव-अनन्त साधक मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। क्रमशः

बालवाटिका

ईमानदार बालक

नेपोलियन बड़ा बहादुर था। बचपन में वह गाँव की पाठशाला में पढ़ता था। वह बहुत गरीब था। शहर जाने के लिए उसके पास पैसा नहीं था। उसके दोस्त उसकी मदद करते थे। नेपोलियन की पाठशाला के पास एक औरत फल बेचा करती थी। वह उससे फल खरीदता था। कभी–कभी उसके पास पैसे नहीं रहा करते थे। वह नेपोलियन को फल उधार भी दे देती थी। कुछ दिन के बाद नेपोलियन ने पढ़ना छोड़ दिया। वह फौज में भर्ती हो गया। उसकी बड़ी तरक्की हुई। अफसर बना। फिर फ्रांस का बादशाह भी बन गया।

एक रोज घूमते–घूमते फ्रांस का बादशाह नेपोलियन उसी पाठशाला के पास गया। उसे पुरानी बात याद आ गई। वह रूक गया। उसने आकर लोगों से पूछा कि पहले यहाँ एक औरत फल बेचा करती थी, अब वह कहाँ है? लोगों ने उस औरत का पता बताया। नेपोलियन चुपचाप उस गली में पहुँचा। औरत के पास जाकर उसने पूछा– मुझे पहचानती हो, बूढ़ी माँ!

औरत ने आश्चर्य से कहा–नहीं! मैं तुम्हें नहीं पहचानती। तुम क्या चाहते हो?

नेपोलियन–पहले आप फल बेचती थीं और स्कूल के पास बैठती थीं न?

औरत–हाँ, लेकिन इससे तुम्हें क्या मतलब?

नेपोलियन–एक लड़का तुमसे फल खरीदता था और कभी–कभी उधार भी लेता था।

औरत–बहुत–से लड़के फल खरीदते थे। मुझे याद नहीं कि कौन गरीब था, लेकिन तुम यह बात क्यों पूछते हो? नेपोलियन–मैं वही गरीब लड़का हूँ। तुम्हारा उधार चुकाने आया हूँ। बोले? तुम्हारा कितना बाकी है? औरत ने मुझे कुछ भी याद नहीं है, लेकिन तुम्हारी बोली मैं पहचानती हूँ। तुम बड़े नटखट थे, लेकिन इतने वर्षों की बात लेकर यहाँ क्यों आये हो? जाओ, मेरा कुछ बाकी नहीं, तुम खुश रहो।

नेपोलियन ने अपनी जेब से एक थैली निकाली। उस थैली में मुहरें थीं। थैली को बूढ़ी माँ के हाथ में रखकर वह चला गया। बुढ़िया आश्चर्य से देखती रह गई।

उसी समय कुछ लोगों ने आकर बुढ़िया से कहा–बुढ़िया! तू जानती है कि यह कौन था? फ्रांस के बादशाह नेपोलियन बोनापार्ट तेरे घर आया था। बुढ़िया के मुँह से निकल पड़ा, कैसा ईमानदार लड़का है। मनुष्य के गुण ही है, जो उसे उन्नति के पथ पर आगे बढ़ाते हैं।

शिक्षा– सच्चरित्र व ईमानदारी से सहज ही पुण्य का संचय होता है। न केवल धर्ममार्ग में, अपितु लौकिक में भी सदाचार व ईमानदारी मनुष्यता की पहचान है।

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– चंदन के पेड़ पर लटके सांप और अजगर, गरूड़ या मोर की आवाज सुनकर तुरंत भाग जाते है।

उसी प्रकार– मिथ्यात्व रूपी अजगर व राग–द्वेष रूपी सांप ज्ञायक स्वभाव का आश्रय लेते ही ढ़ीले पड़कर आत्मा से अलग हो जाते है।

जिस प्रकार– चन्दन को कचरे के ढ़ेर में डाले, कुल्हाड़ी से काटे तो भी चन्दन अपना स्वभाव नहीं छोड़ता सुगन्ध ही बिखेरता है।

उसी प्रकार– आत्मा में चाहे जितनी प्रतिकूलता का संयोग प्राप्त हो तो भी वह अपने ज्ञाता दृष्टा स्वभाव को नहीं छोड़ता है।

जिस प्रकार– रत्न दीपक स्वयं प्रकाशवान होने से प्रचंड पवन आदि से भी नहीं बुझता है।

उसी प्रकार– आत्मा स्वयं प्रकाशवान होने के कारण प्रतिकूलताओं में भी नष्ट नहीं होता।

जिस प्रकार– किसी स्कूटर अथवा कार की मात्र चाबी लेने से काम नहीं बनता। ये सीखना पड़ता है चाबी कैसे लगायी जाये।

उसी प्रकार– शास्त्रों में दिये गये कथनों के अर्थ करने की पद्धति सीखे बिना आचार्यों का अभिप्राय समझ में नहीं आ सकेगा।

जिस प्रकार– कपड़े के अनुसार शरीर नहीं बदला जाता, शरीर के अनुसार कपड़ो की फिटिंग की जाती है।

उसी प्रकार– शास्त्रों के अनुसार अर्थात् वस्तु स्वभाव के अनुसार अपना अभिप्राय बनाना पड़ेगा, अपनी मान्यता के अनुसार शास्त्रों का अर्थ नहीं होता।

जिस प्रकार– किसी बीमारी का ऑपरेशन करने से पहले डॉक्टर बी.पी. को सामान्य करने के लिए दवा देता है। मात्र बी.पी. की दवा खा लेने से बीमारी नहीं टल जाती है।

उसी प्रकार– मिथ्यात्व रूपी बीमारी के ऑपरेशन से पहले तीव्र पापों / व्यसनों में फँसे जीवों को इन्हें छोड़ने को कहा जाता है। मात्र पापों के छोड़ देने से मिथ्यात्व नहीं मिट जाता। मिथ्यात्व तो तत्त्व निर्णय, भेद विज्ञान पूर्वक आत्मरूचि होने पर ही मिटेगा।

जिस प्रकार– चक्ररत्न आयुधशाला में प्रगट हो जाने पर चक्रवर्ती को छह खण्डों पर विजय प्राप्त होती ही है।

उसी प्रकार– जिसे सम्यग्दर्शनरूपी चक्ररत्न की प्राप्ति हो गयी है वह अल्प काल (दो–चार भव) में मुनि–अरहंत–सिद्ध बने ही बनेगा।

क्रमशः **संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की**

समाचार-दर्शन

तीर्थधाम चिदायतन की बैठक सम्पन्न

हस्तिनापुर : उत्तरप्रदेश की धार्मिक, ऐतिहासिक एवं पौराणिक नगरी हस्तिनापुर में पूज्य गुरुदेवश्री के पुण्य प्रभावनायोग में **श्री 1008 शांतिनाथ चिदेश जिनालय** का भव्य निर्माण कार्य उत्तरोत्तर प्रगति पर है। जिसका **भव्य ऐतिहासिक पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव दिनांक 01 दिसम्बर 2024 से 06 दिसम्बर 2024** तक अनेकानेक विशेषताओं पूर्वक होने जा रहा है।

उसी की विशेष तैयारियों में प्रथम बैठक दिनांक 23 दिसम्बर 2023 को प्रतिष्ठाचार्य बालब्रह्मचारी अभिनन्दनकुमार जैन, पण्डित रजनीभाई दोशी, पण्डित जे. पी. दोशी, पण्डित संजय शास्त्री जेवर, पण्डित अशोक लुहाड़िया, पण्डित सुधीर शास्त्री, डॉ. सचिन्द्र जैन, श्री अनिल जैन, श्री स्वप्निल जैन, ऑनलाईन में श्री नवनीत जैन, मेरठ; श्री पारस जैन, पुणे; श्रीमती प्रिया जैन, मङ्गलार्थी अनुभव जैन, करेली; डीपीएस अलीगढ़ के प्रधानाचार्यों आदि की उपस्थिति में आगामी पंचकल्याणक की रूपरेखा व तैयारियों पर विस्तृतरूप से चर्चा की गयी।

पण्डित कैलाशचन्द्रजी का स्मृति दिवस

तीर्थधाम मङ्गलायतन : तीर्थधाम मङ्गलायतन के स्वप्नदृष्टा पण्डित कैलाशचन्द्रजी के स्मृति दिवस (19 दिसम्बर 2022) के अवसर पर विशेष पूजा-अर्चना, पूज्य गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन, सायंकालीन सभा में गोष्ठी एवं पण्डितजी की जीवन यात्रा का वीडियो दिखाकर मनाया गया। गोष्ठी में पण्डित अशोक लुहाड़िया, पण्डित सुधीर शास्त्री ने मङ्गलार्थी छात्रों को उनके संस्मरण तथा उनसे प्राप्त तत्त्वज्ञान के बारे में बताया। इस अवसर पर श्री अनिल जैन, डॉ. सचिन्द्र जैन, मङ्गलार्थी अभिषेक जैन शास्त्री, श्रीमती आशाताईजी, श्रीमती रानी जैन, श्रीमती बीना लुहाड़िया, श्रीमती आलोकवर्धिनी जैन, श्रीमती अनुभूति लुहाड़िया आदि उपस्थित थे।

भारत को विश्वगुरु बनाना है तो युवा आलस्य को त्यागें

अलीगढ़ : मङ्गलायतन विश्वविद्यालय एवं तीर्थधाम मङ्गलायतन के संयुक्त तत्त्वावधान में विश्वविद्यालय परिसर स्थित महावीरस्वामी जिनमन्दिर का वार्षिकोत्सव एवं गोष्ठी का आयोजन धूमधाम से किया गया।

प्रात:काल तीर्थधाम मङ्गलायतन से बड़ी संख्या में मङ्गलार्थी एवं श्रद्धालु विश्वविद्यालय परिसर में पधारे। मन्दिर पर संगीतमय प्रस्तुति के साथ शान्ति विधान का आयोजन पण्डित अशोक लुहाड़िया व समकित शास्त्री द्वारा कराया गया। विधान के उपरान्त तीर्थधाम मङ्गलायतन के डायरेक्टर पण्डित सुधीर शास्त्री के निर्देशन में कीर्तिस्तम्भ पर पूजन विधान सम्पन्न हुआ।

अपराह्न सत्र में सभागार में आयोजित गोष्ठी में जैनदर्शन की मानव जीवन में उपयोगिता विषय पर वक्ताओं ने अपने विचार रखे। तीर्थधाम मङ्गलायतन के ट्रस्टी व मुख्य अतिथि अनिल जैन का स्वागत प्रशासनिक अधिकारी गोपाल राजपूत ने किया। विशिष्ट अतिथि व मुख्य वक्ता पण्डित अशोक लुहाड़िया ने कहा कि अहिंसा ही परम धर्म है।

पण्डित सुधीर शास्त्री ने कहा कि परस्पर सदभाव एवं भाईचारे से खुशियाँ एवं समृद्धि बढ़ेगी। छात्र-छात्राओं द्वारा जैन भक्तियों पर रंगारंग नृत्यों की प्रस्तुतियाँ दी गयी। मुख्य प्रस्तुति निखिल, आयशा, संयम, चेतना, प्रियांशी, दिव्यांशी, अंशिका, कांसू, निया आदि की रही। जिसमें प्रथम चेतना, द्वितीय निखिल रहे। प्रतिभागियों को दोनों संस्थानों द्वारा संयुक्त रूप से सम्मानित किया गया। मंच संचालन डॉ. प्रो. सिद्धार्थ जैन ने किया।

डीन रिसर्च प्रो. रविकान्त ने सभी का आभार प्रकट किया। कार्यक्रम के आयोजन में छात्र हेमन्त, रोहित, शशांक, दयाशंकर, शिवम, आर्यन आदि ने विशेष योगदान दिया। कार्यक्रम के आयोजन पर कुलपति प्रो. पी.के. दशोरा, कुलसचिव बिग्रेडियर समरवीर सिंह, परीक्षा नियंत्रक प्रो. दिनेश शर्मा ने प्रसन्नता व्यक्त की।

दीक्षांत समारोह में जैनदर्शन विभाग का जलवा

नई दिल्ली : श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली ने केन्द्रीय विश्वविद्यालय बनने के अनन्तर अपना प्रथम दीक्षान्त समारोह भारत की राष्ट्रपति श्रीमती द्रोपदी मुर्मू तथा केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री धर्मेन्द्र प्रधान के सान्निध्य में एवं कुलपति प्रो. मुरलीमनोहर पाठक के कुशल नेतृत्व में बहुत ही गरिमापूर्ण तरीके से मनाया।

सम्पूर्ण कार्यक्रम में जैनदर्शन विभाग के अनेक विद्यार्थियों ने विश्वविद्यालय में

सर्वोच्च अंकों के लिए ढ़ेरों स्वर्ण पदक प्राप्त करके रिकार्ड बनाया तथा चार शोधार्थियों ने डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की।

आचार्य जैनदर्शन (परास्नातक) परीक्षा में सन् 2019-शुभम जैन, 2020-दीपा, 2021-बिन्दू, 2022-हिमांशु जैन ने विभाग में सर्वोच्च अंकों के लिए स्वर्णपदक प्राप्त किये। इसी प्रकार शास्त्री (स्नातक) परीक्षा में पूरे विश्वविद्यालय में सर्वोच्च अंक के लिए तथा दर्शन संकाय में सर्वोच्च अंक के लिए 2021-श्रुति जैन, 2022-ममता कौशिक, 2023 के लिए ऋद्धि जैन ने दो-दो स्वर्ण पदक प्राप्त किये।

इसके साथ ही श्री अच्युतकान्त जैन ने प्रो. अनेकान्तकुमार जैन के निर्देशन में एम.फिल. में विश्वविद्यालय में सर्वोच्च अंकों के लिए स्वर्णपदक प्राप्त किया। डॉ. हेमलता ने प्रो. अनेकान्तकुमार जैन के निर्देशन में तथा डॉ. विवेक जैन, डॉ. ऋषभ जैन एवं डॉ. स्नेहलता जैन ने प्रो. वीरसागर जैन के निर्देशन में पी.एचडी. की उपाधि प्राप्त की।

जैनदर्शन विभाग की ही आचार्य प्रथम वर्ष की ऋद्धि जैन तथा **शास्त्री द्वितीय वर्ष की भव्या जैन ने राष्ट्रपतिजी एवं शिक्षा मन्त्रीजी के समक्ष कुलगीतिका प्रस्तुत करके सुयश प्राप्त किया।** श्री सुलेख जैन ने 80 वर्ष की उम्र में शास्त्री-आचार्य करने हेतु विशेष सम्मान प्राप्त किया।

इसके अलावा अन्य सभी विद्यार्थियों ने जैनदर्शन से शास्त्री, जैनदर्शन से आचार्य की डिग्री तथा जैन विद्या से डिप्लोमा एवं सर्टीफिकेट कोर्स के प्रमाण पत्र प्राप्त किये। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. मुरली मनोहर पाठक, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. बरखेड़ी, दर्शन संकाय के डीन प्रो. अरावमुदान, जैनदर्शन विभाग के अध्यक्ष प्रो. वीरसागर जैन, प्रो. अनेकान्तकुमार जैन तथा प्रो. कुलदीप ने सभी विद्यार्थियों को हार्दिक बधाई एवं आशीर्वाद प्रदान किया।

वैराग्य समाचार

छिन्दवाड़ा : श्रीमती सरोजदेवी का देह परिवर्तन शान्तपरिणामपूर्वक हो गया है। आप स्व. डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनीवालों की धर्मपत्नी तथा डॉ. विवेक जैन, छिन्दवाड़ावालों की मातुश्री थीं। आपका जीवन सरल स्वभावी धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत था। उनके वियोग से हमने एक सच्चा आत्मार्थी खोया है, जिसकी पूर्ति सम्भव नहीं है। आपका तीर्थधाम मङ्गलायतन एवं चिदायतन के प्रति विशेष स्नेह था।

अशोकनगर : श्रीमती विमलाबाई का देह परिवर्तन शान्तपरिणामपूर्वक हो गया है। आप मङ्गलार्थी मयंक जैन की दादी थीं।

तीर्थधाम मङ्गलायतन परिवार दिवंगत आत्मा के सुगतिगमन, बोधिलाभ एवं शीघ्र मुक्ति प्राप्ति की भावना भाता है।

श्री आदिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव

सोनगढ़ : पूज्य गुरुदेवश्री की साधनास्थली स्वर्णपुरी सोनगढ़ में दिनांक 19 जनवरी 2024 से 26 जनवरी 2024 तक आयोजित होनेवाले इस महामहोत्सव में आप सभी इष्ट मित्रोंसहित सादर आमन्त्रित हैं।

इस महामहोत्सव में नवनिर्मित जम्बूद्वीप में स्थित 130 जिनेन्द्र भगवन्तों, बालयति भगवन्त, प्रवचनमण्डप के तीन भगवन्त और कृत्रिम पर्वत पर बाहुबली मुनिन्द्र भगवान की भव्य मनोहारी प्रतिमा की प्रतिष्ठा होगी।

आवास के लिये सम्पर्क — 7700006347

षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित
तेरहवीं पुस्तक की वाचना 11 नवम्बर 2023 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम - आदरणीय बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी भाई-बहिनों तथा मङ्गलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होता है।

दोपहर	01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (धवलाजी)**
रात्रि	07.30 से 08.30 बजे तक	मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय
	08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्च्चारण सहित सामान्यार्थ**

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,
Password - tm@4321

- youtube channel - theerthdham mangalayatan

के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

जनवरी-फरवरी 2024 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

4 जनवरी – पौष कृष्ण 8 **अष्टमी**

7 जनवरी – पौष कृष्ण 11

श्री पार्श्वनाथ जन्म-तप कल्याणक

श्री चन्द्रप्रभ जन्म-तप कल्याणक

10 जनवरी – पौष कृष्ण 14 **चतुर्दशी**

श्री शीतलनाथ ज्ञान कल्याणक

14 जनवरी –पौष शुक्ल 5

मकर संक्रांति

18 जनवरी – पौष शुक्ल 8 **अष्टमी**

20 जनवरी – पौष शुक्ल 10

श्री शान्तिनाथ ज्ञान कल्याणक

21 जनवरी – पौष शुक्ल 11

श्री अजितनाथ ज्ञान कल्याणक

24 जनवरी – पौष शुक्ल 14 **चतुर्दशी**

श्री अभिनंदननाथ ज्ञान कल्याणक

25 जनवरी – पौष शुक्ल पूर्णिमा

श्री धर्मनाथ ज्ञान कल्याणक

31 जनवरी से 6 फरवरी –

माघ कृष्ण 5 से माघ कृष्ण 11

तीर्थधाम मङ्गलायतन वार्षिक तिथि

3 फरवरी – माघ कृष्ण 8 **अष्टमी**

7 फरवरी – माघ कृष्ण 12

श्री शीतलनाथ जन्म-तप कल्याणक

8 फरवरी – माघ कृष्ण 13-14 **चतुर्दशी**

श्री ऋषभदेव निर्वाण कल्याणक

9 फरवरी – माघ कृष्ण 14 **चतुर्दशी**

श्री ऋषभदेव निर्वाण कल्याणक

श्री श्रेयांसनाथ ज्ञान कल्याणक

11 फरवरी – माघ शुक्ल 2

श्री वासुपूज्य ज्ञान कल्याणक

13 फरवरी – माघ शुक्ल 4

श्री विमलनाथ जन्म-तप कल्याणक

14 फरवरी – माघ शुक्ल 5

बसंज पंचमी, श्री दशलक्षण व्रत प्रारम्भ

आचार्य कुंदकुंद जन्म दिन

15 फरवरी – माघ शुक्ल 6

श्री विमलनाथ ज्ञान कल्याणक

16 फरवरी – माघ शुक्ल 7-8 **अष्टमी**

18 फरवरी – माघ शुक्ल 10

श्री अजितनाथ जन्म-तप कल्याणक

21 फरवरी – माघ शुक्ल 12

श्री अभिनंदननाथ जन्म-तप कल्याणक

22 फरवरी – माघ शुक्ल 13

श्री धर्मनाथ जन्म-तप कल्याणक

23 फरवरी – माघ शुक्ल 14

अनंत चतुर्दशी

28 फरवरी – फाल्गुन कृष्ण 4

श्री पद्मप्रभ निर्वाण कल्याणक

तीर्थधाम चिदायतन में

विकास के बढ़ते चरण....

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2024-26

स्वर्णिम अवसर—

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन में प्रवेश हेतु

तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के आगामी सत्र में अंग्रेजी माध्यम से कक्षा सातवीं पास कर चुके एवं कक्षा आठवीं तथा ग्यारहवीं के लिए भी सुनहरा अवसर है जो भी छात्र यहाँ के सुरम्य वातावरण में उच्चस्तरीय लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा का भी लाभ प्राप्त करना चाहते हैं, वे हमारे कार्यालय अथवा वेबसाइट से प्रवेश आवेदन-पत्र मंगाकर अपेक्षित जानकारियों एवं प्रपत्रों के साथ भरकर भेज देवें।

विदित हो कि कम से कम 60 प्रतिशत या उससे अधिक अंक प्राप्त विद्यार्थी ही आवेदन योग्य हैं, स्थान सीमित हैं। अत: शीघ्र ही पूर्ण जानकारी प्राप्त कर आवेदन-पत्र भेजने का अनुरोध है। अन्तिम तिथि - 20 फरवरी 2024।

तीर्थधाम मङ्गलायतन (प्रवेश फार्म, भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन)
C/o विमलांचल, हरिनगर, गोपालपुरी, अलीगढ़ (उ.प्र.) 202001
सम्पर्क सूत्र-9756633800 (पण्डित सुधीर शास्त्री); 7581060200;
8279559830 (उपप्राचार्य)
info@mangalayatan.com; www.mangalayatan.com

पं. सं. : DELBIL/2001/4685
स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक** : डॉ. जयन्तीलाल जैन,मङ्गलायतन वि०वि०

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन
श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)
Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust
Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)
Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22
info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com